Bihar Board Class 7 Social Science History Notes
Chapter 7 सामाजिक-सांस्कृतिक विकास

सामाजिक-सांस्कृतिक विकास

पाठ का सार संक्षेप

भारत में प्राचीन काल से ही मेल-जोल की परम्परा रही है। तर्क-अफगान आक्रमणकारियों के पहले जितने भी आक्रमणकारी आये, वे हारे या जीते यहीं के होकर रह गये । आज कौन यूनानी है और कौन शक या हूण किसी की कोई पहचान नहीं, सब परस्पर घुल-मिल गये । तुर्क-अफगानों के बाद मुगल आये । आरम्भ में थोड़ा-बहुत मनोमालिन्य के बाद सभी एक-दूसरे के साथ घुलमिल गये, लेकिन इन्होंने अपनी पहचान कायम रखी । वैसे तो व्यापारिक काम से अरब के लोग सातवीं सदी के आरम्भ से ही आना आरम्भ कर दिये थे, जिस समय इस्लाम का जन्म भी नहीं हुआ था । इस्लाम के फैलने के बाद पहला आक्रमण आठवीं सदी में मुहम्मद-बिन-कासिम के नेतृत्व में सिंध और दक्षिण-पश्चिम पंजाब पर हुआ और वहाँ उनका शासन स्थापित हो गया। लेकिन ये अल्पकाल तक ही टीक पाये।

सिलसिलेवार आक्रमण महमूद गजनवी का था, किन्तु राज्य विस्तार के लिये नहीं, बल्कि लूट-पाट मचाने के लिये । इसके लूट-पाट की खबरों से भारतीय राजाओं की शक्ति की पोल खुल गई । मुहम्मद गोरी ने पृथ्वीराज चौहान को हराकर यहाँ दिल्ली को हड़प लिया । उसी ने यहाँ उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र को अपने नियंत्रण में कर दिल्ली सल्तनत की नींव डाल दी। स्वयं तो गोरी लौट गया किन्तु अपने एक विश्वासी सेनापति को यहाँ का शासन सौंप गया । सेनापति चूँकि उसका गुलाम था, अत: उसके वंश को गुलाम वंश कहा गया । 1206 में गुलाम वंश की स्थापना हो चुकी थी।

तेरहवीं शताब्दी के आरम्भ से तुर्क-अफगानों के साथ कुछ बौद्धिक
स्तर, पर मेलजोल बढ़ने लगा था । अलबरूनी ने हिन्दुओं के धर्म,
विज्ञान और सामाजिक जीवन से सम्बद्ध 'किताब-उल-हिन्द' लिखी ।
सूफी संत और इस्लाम धर्म प्रचारक गाँव-गाँव घूमकर लोगों को मन से तुर्कों के निकट लाने का सफल प्रयास किया । सूफी संतों के प्रति हिन्दुओं का उतना ही सम्मान . था जितना मुसलमानों का । खानकाहों और पीरों के दरगाहों पर हिन्दुओं का आना-जाना बढ़ गया । तुर्क-अफगान और मुगलों के शासन कार्य की भाषा फारसी थी । अतः हिन्दू राज्य कर्मचारियों को फारसी पढ़ना पड़ा । आगे चलकर फारसी, तुर्की, ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली हिन्दी को मिलाकर उर्दू भाषा का विकास हुआ । उर्दू ने हिन्दू-मुसलमानों को और भी निकट ला दिया ।

यद्यपि कागज का आविष्कार चीन में हुआ, लेकिन इसके तकनीक को भारत में लाने वाले फारस वाले ही थे । इससे लाभ हुआ कि अब भारत में पुस्तक लेखन का काम पत्तों के बजाय कागज पर होने लगा । जिन हिन्दुओं ने इस्लाम धर्म को कबूला, उन्होंने शादी-विवाह की अपनी पुरानी परम्परा को । जारी रखा । कुछ बाहरी मुसलमान भारतीय परम्पराओं को अपनाने लगे । इससे एक मिल-जुली संस्कृति का विकास हुआ ।
भारत में भक्ति अर्थात ईश्वर के प्रति अनुराग की परम्परा प्राचीन काल से ही चलती आई है। दक्षिण भारत में भक्ति एक आन्दोलन के रूप में चल पड़ी । इन्होंने तीन मार्ग, बताए :

1. ज्ञान मार्ग
2. कर्म मार्ग तथा

https://www.evidyarthi.in/

3. भक्ति मार्ग ।

श्रीमद्भागवत बताता है कि मनुष्य भक्ति भाव से ईश्वर की शरण में जाकर पुनर्जन्म के झंझट से मुक्ति प्राप्त कर सकता है । पुराणों में उल्लेख है कि भक्त भले ही किसी जाति-पाति का हो, वह सच्ची भक्ति से ईश्वर की प्राप्ति कर सकता है । वेदों और उपनिषदों में आत्मा-परमात्मा के बीच सीधा सम्बंध स्थापित करने का विचार व्यक्त किया गया है । उपनिषदों ने धार्मिक ब्राह्माडम्बर को त्यागने को कहा ।

वैदिक रीति-रिवाज, पूजा-पाठ, धार्मिक कर्मकांड काफी महंगा हो गया था । पुरोहित अपने लाभ के लिये कर्मकाण्ड को खर्चीला बनाते जा रहे थे । सर्वसाधारण इन पाखंडों से ऊबने लगा था । दलित वर्ग छुआ-छूत और ऊँच-नीच के भेद-भाव से अपने को अपमानित महसूस कर रहा था ।

इस्लाम धर्म एकेश्वरवादी एवं समतावादी सिद्धान्त का प्रचार करता था। इस्लाम में कोई ऊँच और न कोई नीच होता है । इससे भक्त संतों ने हिन्दू-ध म में आत्म सुधार के प्रयास शुरू किए और भक्ति आन्दोलन चल पड़ा । भक्ति आन्दोलन को आप लोगों तक पहुँचाने का काम तमिल क्षेत्र के अलवार और नयनार संतों ने किया । इन्होंने भी पुनर्जन्म से मुक्ति और ईश्वर के पूर्ण भक्ति पर बल दिया । इन्होंने समाज के सभी लोगों के बीच अपने

मत का प्रचार किया । भक्त संतों का आम जनों से सीधा संबंध था । फलतः लोगों ने इनके सम्मान में मंदिरों का निर्माण किया तथा इनकी जीवनियाँ लिखीं।

भक्ति काल में ही महान दार्शनिक आदि शंकराचार्य का प्रादुर्भाव हुआ। ... अपनी 32 वर्ष की अल्पाआयु में इन्होंने भारत के चारों ओर मठों का निर्माण

कराया, जिससे देश की एकता हर तरह से बनी रहे । शंकराचार्य ने उत्तर में बद्रीकाश्रम, दक्षिण में श्रृंगेरी मठ, पूरब में पुरी तथा पश्चिम में द्वारिका मठ का निर्माण कराया और वहाँ पुजारियों को नियुक्त किया । शंकराचार्य अद्वैतवादी सिद्धांत के प्रतिपादक थे। उनका मानना था कि केवल ब्रह्म ही सत्य है, बाकी सब मिथ्या हैं। इनके मत को रामानुज ने आगे बढ़ाया।

दक्षिण भारत में 'वीरशैव' आन्दोलन शुरू हुआ । इन्होंने ब्राह्मणवाद के विरुद्ध निम्न जातियों और नारियों के प्रति समर.कदी विचार प्रस्तुत किये । मूर्तिपूजा और कर्मकाण्डों का विरोध किया गया । रामानुज के विचार सम्पूर्ण दक्षिण भारत से लेकर महाराष्ट्र तक फैल गया ।

महाराष्ट्र की वैष्णव भक्ति की धारा में 13वीं सदी के नामदेव से 17वीं सदी के तुकाराम तक भक्तों की एक समृद्ध परम्परा देखने को मिलती है। इन लोगों ने ईश्वर के प्रति श्रद्धा, भक्ति और प्रेम के सिद्धान्त का प्रचार किया। इन्होंने मूर्ति पूजा, तीर्थ, कर्मकाण्ड आदि का खण्डन किया, ऊँच-नीच के भेद-भाव का विरोध किया तथा अपने अनुयायियों में सभी जाति के लोगों, महिलाओं और मुसलमानों को भी शामिल किया ।

तेरहवीं सदी के बाद उत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन सुधारवादी आन्दोलन में बदल गया। इस आधार पर ब्राह्मणवादी हिन्दू धर्म, इस्लाम, सूफी संतों एवं तत्कालिन धार्मिक सम्प्रदायों नाथ पंथियों, सिद्धों तथा योगियों आदि की विचारधाराओं को स्पष्ट झलक देखने को मिलती है । इसमें सूफी संतों का भी योग था ।

रामानुज की भक्ति परम्परा को उत्तर भारत में लोकप्रिय बनाने का श्रेय
रामानन्द को है । कबीर रामानन्द को ही अपना गुरु मानते थे । कबीर
ने इनके मत के प्रचार के लिये बहुत कुछ किया । जाति-पाति और धर्म
आदि सबसे ऊपर उठकर कबीर ने कहा : "जात-पात पूछे नहिं कोई, हरि को भजै सी हरि को होई ।"

https://www.evidyarthi.in/

सगुण सम्प्रदाय वाले राम को विष्णु का अवतार मानते हैं, जबकि निर्गुण सम्प्रदाय वाले ईश्वर की कल्पना निराकार ब्रह्म के रूप में करते हैं । सगुण सम्प्रदाय के प्रमुख संत तुलसी दास थे। वैष्णव धर्म की परम्परा में कृष्ण भक्तों की भी अच्छी जमात है। इस परम्परा के प्रमुख कवि थे मीरा बाई, चैतन्य महाप्रभु, सूरदास, रसखान आदि ।

कबोर ने ब्राह्मणवादी हिन्दू धर्म और इस्लाम-दोनों के ब्राह्मडबर तथा कार्यकलापों की निन्दा की । कबीर के समकालीन गुरुनानक थे । ये भी सामाजिक-धार्मिक कुरीतियों के विरोधी थे। इनको मानने वाले 'सिक्ख' कहलाते हैं । एसे संतों में दरिया साहब भी एक प्रमुख संत थे । बिहार के शाहाबाद क्षेत्र में इन्होंने अपने मत का प्रचार किया । ये भी एकेश्वरवादी थे। इन्हें मानने वाले वाराणसी तक में थे ।

सूफीवाद के तहत रहस्यवाद की भावना का अर्थ था कि ईश्वर के रहस्य को जानने का प्रयास करना । भक्त संतों तथा सूफी संतों में काफी समानता थी। सूफी संतों ने मूर्ति पूजा को अस्वीकार किया और एकेश्वरवाद को माना ।

इस्लाम ने शरियत एवं नमाज को प्रधानता दी. जबकि सफी ईश्वर के साथ किसी की परवाह किये बगैर वैसे ही जुड़ा रहना चाहते थे जिस प्रकार बच्चा अपनी माँ से ।

भारत में सबसे पहले सूफी खानकाह की स्थापना का श्रेय सुहरावर्दी परम्परा के संत बहाउद्दीन जकरिया को है । इस परम्परा के संतों ने राजकीय सहयोग से सुखमय जीवन व्यतीत किया और धर्मान्तरण को बढ़ावा दिया ।

खानकाह शिक्षा के महत्वपूर्ण केन्द्र थे । यहाँ अरबी और फारसी की शिक्षा दी जाती थी। यहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनों शिक्षा पाते थे । फुलवारी शरीफ का खानकाह बहुत प्रसिद्ध था । यहाँ की लाइब्रेरी अत्यंत समृद्ध है और यहाँ पाण्डुलिपियों का अम्बार है। देश-विदेश के शोधकर्ता यहाँ आते थे और आते हैं।

भारत में चिश्ती परम्परा भी काफी लोकप्रिय हुई । इसकी स्थापना
अजमेर, शरीफ में ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती ने की थी। इस परम्परा के
महत्त्वपूर्ण चिश्ती थे राजस्थान के हमीदुद्दीन नागोरी, दिल्ली के ख्वाजा
निजामद्दीन औलिया । निजामुद्दीन औलिया को इस सम्प्रदाय के फैलाने का श्रेय दिया जाता है।

भारत की मिली-जुली संस्कृति को बिहार में मजबूत करने का काम मनेरी साहब ने किया। इन्होंने समन्वयवादी संस्कृति के निर्माण का सक्रिय प्रयास किया। मनेरी साहब ने मनेर से सुनार गाँव की यात्रा की और ज्ञानार्जन किया । इन्होंने राजगीर एवं बिहार शरीफ में तपस्या की और धर्म प्रचार किया । मनेरी साहब का मजार बिहार शरीफ में है ।

https://www.evidyarthi.in/